रा, मेरे हृदय को तो संतुष्टि न मिली।

मेरी इन बातों को सुनकर, सोचता हूँ, तुम्हें ध्यान आएगा कि
कितना स्वार्थी हूँ, जो तेरी प्रसन्नता में अपनी प्रसन्नता नहीं
भता। प्रसन्नता तो मुझे बड़ी हुई थी। अपने आराध्य देव के
रों पर प्रसन्नता की रेखा देखकर कौन भक्त आनन्द की चरम
ता को नहीं छू लेता, कौन भक्त आनन्दातिरेक से पागल नहीं
उठता! पर भक्तहृदय आनन्द और प्रसन्नता के लिए ही तो
कुल-विह्वल नहीं रहता। प्रसन्नता तो आत्मचेतना की एक अनु-
है। भक्त तो आत्मसमर्पण करके वह विस्मृति ढूंढता है, जो
और विषाद से परे है। अरे, यह अपनेपन का भार! अरे, इसे
र फेंकने की आतुरता! अरे, इस महान त्याग में भी स्वार्थ की
! मानव-जीवन कितना अपूर्ण है! हमारे महान त्याग में
हमारा महान स्वार्थ है। संसृति की नींव इसी त्याग-स्वार्थ की
न भावना पर स्थित है।

बादल अपना अपनापन अगणित बूंदों में, बूंदें अपना अपना-
जलधाराओं और नदियों में और नदियाँ अपना अपनापन समुद्र
खोने को आतुर हैं। और वह समुद्र भी तो हर समय विक्षुब्ध
र किसी ऐसे की खोज कर रहा है, जिसके चरणों में वह अपनी
र्ण जलराशि अर्घ्य-रूप में अर्पित करके रिक्त हो जाए। पृथ्वी
ा अपनापन अगणित वृक्ष, बेलि, पौधों में; वृक्ष, बेलि, पौधे
ा अपनापन पुष्प और कलियों में, पुष्प और कलियाँ अपना
ापन—अपना सौरभ—समीर में मिश्रित करने को आकुल
और वह समीर भी तो निरन्तर चचल रहकर किसी ऐसे को
रहा है, जिसके अचल को एक बार—केवल एक बार—लहरा-
वह उसी में विलुप्त हो जाए। पतंग अपना अपनापन दीपक
ागे; दीपक अपना अपनापन दिवस के आगे, दिवस अपना
ापन रजनी के आगे और रजनी—शशि-तारक-मणिमंडित

रजनी—अपना अपनापन सूर्य के आगे अर्पण करने को व्याकुल है; और वह सूर्य भी तो आदिसृष्टि से किसी ऐसी महज्ज्योति के चरणों को प्राप्त करने के लिए तपस्या कर रहा है, जिसकी एक बार आरती उतारकर वह बुझ जाए।

इसी प्रकार वादक अपना अपनापन स्वरों में प्रकट करके यह चाहता है कि वे किसी के कानों में क्षण-भर गूँजकर, विस्तृत गगन में क्षीण होकर विलीन हो जाएँ। चित्रकार अपना अपनापन रेखाओं तथा रंगों में प्रकट करके यह इच्छा करता है कि वे किसी की आँखों में पल-भर प्रतिबिंबित होकर धुँधले बनकर तिरोहित हो जाएँ। शिल्पकार अपना अपनापन पाषाण-प्रतिमाओं में अभिव्यक्त करके यह अभिलाषा करता है कि वे किसी की मृदुल हथेली का क्षणिक स्पर्श प्राप्त कर खंड-खंड होकर धरा पर बिखर जाएँ। और, कवि अपना अपनापन सजीव शब्द-पदों में व्यंजित करके चाहता है कि वे किसी के हृदय को धीमता से छूकर संसार के सघन कोलाहल में छिप जाएँ—खो जाएँ।

हाँ, तो इस स्वार्थी मानव की, जिसमें मैं भी एक हूँ, चरम अभिलाषा आत्मानंद नहीं, आत्मसमर्पण है। इसका सौभाग्य इसे उस दिन प्राप्त न हो सका। इसी कारण इतनी जल्दी आज यह कुछ अपनापन लेकर तेरे चरणों में फिर उपस्थित हुआ है। इस अनिवार्य स्वार्थ के लिए मैं क्षमा की भिक्षा माँगता हूँ। मुझे विश्वास है कि मैं निराश नहीं लौटूँगा। कभी नहीं लौटा।

आज मदिरा लाया हूँ—मदिरा, जिसे पीकर भविष्यत् के भय भाग जाते हैं और भूतकाल के दारुण दुःख दूर हो जाते हैं, जिसे पान कर मान-अपमानों का ध्यान नहीं रह जाता और गौरव का गर्व लुप्त हो जाता है, जिसे ढालकर मानव अपने जीवन की व्यथा, पीड़ा और कठिनता को कुछ नहीं समझता और जिसे चखकर मनुष्य श्रम, संकट, संताप सभी को भूल जाता है। आह, जीवन

की मदिरा, जो इसे विवश होकर पीनी पड़ती है, कितनी कड़वी ! कितनी ! यह मदिरा उस मदिरा के मद को उतार देगी, जो की दुराकांक्षिणी चेतना को निवृत्ति के गर्त में गिरानेवाली तथा उ देगा, दुर्दम काम, निर्मम कर्म और निर्दय नियति के क्रूर, कठोर कुटिल आघातों से रक्षा करेगी। शीत, लू, झंझावात, दु मानव के प्राण जन-जीवन की समस्त आधि-व्याधियों की बड़ी महौषधि है। मेरा हृदय कहता है कि आज इसकी मुझे आवश्यकता है। ले, इसे पान कर, और इस मद के उन्माद में आने को, भ दुःख को, अपने दुःसह समय को और समय के कठिन चक्र को भू जा। ले, इसे पी, और इस मधु से अपना जीवन मदोन्माद, स् स्फूर्ति और नवल उमंगों से भर। उफ, किसे ज्ञात है कि यह दु को मदोन्मत्त कर देनेवाला स्वयं कितने अवसादों का पुंज है ! कि मालूम है कि दूसरों को शीतलता प्रदान करनेवाला स्वयं कितनी भीषण ज्वाला से दग्ध हुआ करता है !

यह मेरे हृदय की मदिरा है। मत समझ, तू अकेले जलता है। तू जलता है, पर प्रभाव मुझपर पड़ता है। तू जलता है, मैं गलता हूँ; तू तपता है, मैं पिघलता हूँ। मैं भी शीतल मधु की खोज में आया था, पर तूने मुझे अपना हृदय दिया, हृदय की ज्वाला दी। यह मेरे हृदय की हाला तेरी ज्वाला से गल-पिघल-कर प्रवाहित हो उठी है। ले, इसे पीकर अपने हृदय की अग्नि को शांत कर। जो हृदय कल मधु का प्यासा था, वही आज प्यास बुझानेवाला मधु हो गया है।

कवि का हृदय केवल कवि का हृदय नहीं है। उसकी हृदय-गोद में त्रिकाल और त्रिभुवन सोते रहते हैं, सृष्टि दुधमुँही बच्ची के समान क्रीड़ा करती है, और प्रलय नटखट बालक के समान उत्पात मचाता है। उसका हृदयांगण गगन के गान, समीरण के हास और सागर के रोदन से प्रतिध्वनित हुआ करता है। उसके

हृदय मन्दिर में जन्म-जीवन-मरण अविरत गति से नृत्य किया करते हैं। इस कारण कवि के हृदय के गलने के साथ ही आज समस्त विश्व मादक हाला से परिप्लावित हो उठा है। जल और थल, गगन और पवन, सिन्धु और वसुन्धरा, स्वर्ग और नरक, जड़ और चेतन, निशा और दिवस, वन और उपवन, सर और सरिता, मिलन और विरह, प्रणय और मपर्ष, आशा और निराशा, जन्म और जीवन, काल और कर्म—सभी वस्तुएँ जिनका अस्तित्व इस विश्व में है, आज हाला-प्याला-मधुशालामय आभासित हो रही हैं।

मेरे प्यारे, देख, अखिल प्रकृति मधुशाला बनकर झूम रही है। आ, तुझे पुरुष बनाकर मैं मायारूपिणी चपला साकीबाला बनूं। मैं अपने हाथों से प्याला भर-भरकर तेरे अधरों से लगाऊँ और तू अनंत काल तक अनन्त पिपासा से इसे पीता चला जाए। न मैं पिलाने से थकूं और न तू पीने से।

भगवन्, क्षमा, क्षमा, क्षमा ! अरे, अपने इस मृत मृत्तिका-पात्र को तेरे ज्योतिर्मय अधरों तक ले आने का दुस्साहस ! मेरा अभिमान क्षमा कर, मेरे हाथ काँप रहे हैं, मेरा पात्र हिल रहा है, मेरी मदिरा गिरी जाती है। अरे, पद भी प्रकम्पित हो रहे हैं, शरीर के अग-अग के जोड़ खुल-से रहे हैं, रोम-रोम सिहर रहा है, अरे, मैं गिरी…!

मेरी मदिरा तेरे चरणों में फिर भी चढ़ गई। मैं सन्तुष्ट हूं। भक्त की मदिरा—विनम्र भक्त की मदिरा—भगवान के अधरों पर नहीं, चरणों में ही चढ़नी उचित है। पर ऊपर देखती हूँ। यह क्या ? तेरी आँखों में यह मतवालापन कैसा ? उन्मत्तता कैसी ? मस्ती कैसी ? तेरे अधर हिल रहे हैं ? तू मुस्करा क्यों रहा है ?

क्या तू कुछ कह रहा है ? क्या यही कि—

पीकर मदिरा मस्त हुआ तो
प्यार किया क्या मदिरा से !

क्या तू मेरी मदिरा पान कराने की अभिलाषा से ही प्रश्न उठा ? धन्य तू और धन्य मैं !

पर तू मुझे उन मद-भरे नयनों से न देख, मेरा जी न जाने होने लगता है। ले, मैं आँख मूंद रही हूँ।

ओह, उन मतवाली आँखों की ओर न देखा ही जाता है न उनको बिना देखे रहा ही जाता है, उन्हें एक बार फिर से लूं।

पर अरे, अरे, वे मादक नयन किधर गए ? वह मादक द किधर गया ? उसको कहाँ ढूंढूं ? पर क्यों ?

मैं उन्हें न ढूंढूंगी। उन मादक नयनों की एक चितवन मु अनन्त काल तक उन्मत्त रखेगी। भक्त को चाहिए सिंधु की तृष्णा और बिंदु से सन्तोष।

तेरी मतवाली आँखों की हाला सदा मेरे पलकों के प्याले में छलका करे और जो मुझे देखे वह तेरी मदिरा से मस्त हो उठे।

प्रयाग
२७ अगस्त, १९३३*

तेरे मदिर नयनों के निरंतर ध्यान में
[illegible]

---

*इस समय तक 'रुबाइयात उमर ख़ैयाम' की समता पर 'मधुशाला' ७५ रुबाइयाँ थी, दिसम्बर १९३३ तक, जब इनमें से कुछ 'सरस्वती' में प्रकाशित हुईं; इनकी संख्या १०८ तक पहुँची और मार्च, '३४ तक, जब ये संग्रह-रूप में छपने को अभ्युदय प्रेस, प्रयाग में दी गईं (जो छपी नहीं) अपने वर्तमान रूप में आईं।

मधुशाला

१

मृदु भावों के अंगूरों की
आज बना लाया हाला,
प्रियतम, अपने ही हाथों से
आज पिलाऊँगा प्याला;
पहले भोग लगा लूँ तेरा,
फिर प्रसाद जग पाएगा;
सबसे पहले तेरा स्वागत
करती मेरी मधुशाला।

२

प्यास तुझे तो, विश्व तपाकर
पूर्ण निकालूँगा हाला,
एक पाँव से साक़ी बनकर
नाचूँगा लेकर प्याला;
जीवन की मधुता तो तेरे
ऊपर कब का वार चुका,
आज निछावर कर दूँगा मैं
तुझपर जग की मधुशाला।

३

प्रियतम, तू मेरी हाला है,
मैं तेरा प्यासा प्याला,
अपने को मुझमें भरकर तू
बनता है, पीनेवाला;
मैं तुझको छक छलका करता
मस्त मुझे पी तू होता;
एक दूसरे को हम दोनों
आज परस्पर मधुशाला।

४

भावुकता अंगूर लता से
खींच कल्पना की हाला,
कवि साक़ी बनकर आया है
भरकर कविता का प्याला;
कभी न कण-भर खाली होगा
लाख पिएँ, दो लाख पिएँ!
पाठकगण हैं पीनेवाले,
पुस्तक मेरी मधुशाला।

५

मधुर भावनाओं की सुमधुर
नित्य बनाता हूँ हाला,
भरता हूँ इस मधु से अपने
अंतर का प्यासा प्याला;
उठा कल्पना के हाथों से
स्वयं इसे पी जाता हूँ;
अपने ही में हूँ मैं साक़ी,
पीने वाला, मधुशाला।

६

मदिरालय जाने को घर से
चलता है पीनेवाला,
'किस पथ से जाऊँ ?' असमंजस
में है वह भोलाभाला,
अलग-अलग पथ बतलाते ;
पर मैं यह बतलाता हूँ
'राह पकड़ तू एक चला चल,
पा जाएगा मधुशाला।'

७

चलने ही चलने में कितना
जीवन, हाय, बिता डाला !
'दूर अभी है', पर, कहता
हर पथ बतलाने
हिम्मत है न ब
साहस है न
किंकर्तव्यविमूढ़
दूर खड़ी है

८

मुख से तू अविरत कहता जा
मधु, मदिरा, मादक हाला,
हाथों में अनुभव करता जा
एक ललित कल्पित प्याला,
ध्यान किए जा मन में सुमधुर
सुखकर, सुंदर साकी का,
और बढ़ा चल, पथिक, न तुझको
दूर लगेगी मधुशाला।

९

मदिरा पीने की अभिलाषा
ही बन जाए जब हाला,
अधरों की आतुरता में ही
जब आभासित हो प्याला,
बने ध्यान ही करते-करते
जब साकी साकार, सखे,
रहे न हाला, प्याला, साकी,
तुझे मिलेगी मधुशाला।

१४

लाल सुरा की धार लपट-सी
कह न इसे देना ज्वाला,
फेनिल मदिरा है, मत इसको
कह देना उर का छाला,
दर्द नशा है इस मदिरा का,
विगतस्मृतियाँ साक़ी हैं;
पीड़ा में आनंद जिसे हो,
आए मेरी मधुशाला।

१५

जगती की शीतल हाला-सी
पथिक, नही मेरी हाला,
जगती के ठंडे प्याले-सा,
पथिक, नहीं मेरा प्याला;
ज्वाल-सुरा जलते प्याले में
दग्ध हृदय की कविता है;
जलने से भयभीत न जो हो,
आए मेरी मधुशाला।

१६

बहती हाला देखी, देखो
लपट उठाती अब हाला,
देखो प्याला अब छूते ही
होठ जला देनेवाला ;
'होंठ नहीं, सब देह दहे, पर
पीने को दो बूँद मिले'—
ऐसे मधु के दीवानों को
आज बुलाती मधुशाला।

१७

धर्म ग्रन्थ सब जला चुकी है
जिसके अंतर की ज्वाला,
मंदिर, मस्जिद, गिरजे—सबको
तोड़ चुका जो मतवाला,
पंडित, मोमिन, पादरियों के
फंदों को जो काट चुका,
कर सकती है आज उसी का
स्वागत मेरी

२०

सब मिट जाएँ, बना रहेगा
सुन्दर साकी, यम काला,
सूखें सब रस, बने रहेंगे
किन्तु, हलाहल औ' हाला,
धूमधाम औ' चहल-पहल के
स्थान सभी सुनसान बनें,
जगा करेगा अविरत मरघट,
जगा करेगी मधुशाला।

२१

बुरा सदा कहलाया जग में
बाँका, मद-चंचल प्याला,
छैल-छबीला, रसिया साकी,
अ ल बे ला पी ने वा ला;
पटे कहाँ से, मधुशाला औ'
जग की जोड़ी ठीक नहीं—
जग जर्जर प्रतिदिन, प्रतिक्षण, पर
नित्य - नवेली मधुशाला।

२४

बिना पिए जो मधुशाला को
बुरा कहे, वह मतवाला,
पी लेने पर तो उसके मुँह
पर पड़ जाएगा ताला;
दास-द्रोहियों दोनों में है
जीत सुरा की, प्याले की;
विश्वविजयिनी बनकर जग में
आई मेरी मधुशाला।

२५

हरा-भरा रहता मदिरालय,
जग पर पड़ जाए पाला,
वहाँ मुहर्रम का तम छाए,
यहाँ होलिका की ज्वाला;
स्वर्ग लोक से सीधी उतरी
वसुधा पर, दुख क्या जाने;

१०

सूर्य बने मधु का विक्रेता,
सिन्धु बने घट, जल, हाला,
बादल बन-बन आए साकी,
भूमि बने मधु का प्याला,
झड़ी लगाकर बरसे मदिरा
रिमझिम, रिमझिम, रिमझिम कर,
बेलि, विटप, तृण बन मैं पीऊँ,
वर्षा ऋतु हो मधुशाला।

११

तारक मणियों से सज्जित नभ
बन जाए मधु का प्याला,
सीधा करके भर दी जाए
उसमें सागर-जल हाला,
मत्त समीरण साकी बनकर
अधरों पर छलका जाए,
फैले हों जो सागर तट-से,
विश्व बने यह मधुशाला।

३२

अधरों पर हो कोई भी रस
जिह्वा पर लगती हाला,
भाजन हो कोई हाथों में
लगता रक्खा है प्याला,
हर सूरत साक़ी की सूरत
में परिवर्तित हो जाती,
आँखों के आगे हो कुछ भी,
आँखों में है मधुशाला।

३३

पौधे आज बने हैं साक़ी
ले-ले फूलों का प्याला,
भरी हुई है जिनके अन्दर
परिमल-मधु-सुरभित हाला,
मांग-मांगकर भ्रमरों के दल
रस की मदिरा पीते हैं,
झूम-झपक मद-झंपित होते,
उपवन क्या है, मधुशाला!

१८

अन्धकार है मधुविक्रेता,
सुन्दर साकी, शशिबाला,
किरण किरण में जो छलकाती
जाम जुम्हाई का हाला,
पीकर जिसको चेतनता खो
लेने लगते हैं झपकी
तारकदल - से पीनेवाले ;
रात नहीं है, मधुशाला।

१९

किसी ओर मैं आँखें फेरूँ,
दिखलाई देती हाला,
किसी ओर मैं आँखें फेरूँ,
दिखलाई देता प्याला,
किसी ओर मैं देखूं, मुझको
दिखलाई देता साकी,
किसी ओर देखूं, दिखलाई
पड़ती मुझको मधुशाला।

४०

साक़ी बनकर मुरली आई
साथ लिए कर में प्याला,
जिनमें वह छलकाती लाई
अधर-सुधा-रस की हाला;
योगिराज कर संगत उसकी
नटवर नागर कहलाए;
देखो कैसों - कैसों को है
नाच नचाती मधुशाला।

वादक बन मधु का विक्रेता
लाया सुर - सुमधुर - हाला,
रागिनियाँ बन साक़ी आई
भरकर तारों का प्याला,
विक्रेता के संकेतों पर
दौड़ लयों, आलापों में,
पान कराती श्रोतागण को ;
झंकृत वीणा मधुशाला।

५१

चित्रकार बन साकी आता
लेकर तूली का प्याला,
जिसमें भरकर पान कराता
वह बहु रस रंगी हाला,
मन के चित्र जिसे पी-पीकर
रंग-बिरंग हो जाते,
चित्रपटी पर नाच रही है
एक मनोहर मधुशाला।

५२

घन-श्यामल अंगूर लता से
खिंच-खिंच यह आती हाला,
अरुण-कमल-कोमल कलियों की
प्याली, फूलों का प्याला,
लोल हिलोरें साकी बन-बन
माणिक मधु से भर जातीं,
हंस मत्त होते पी-पीकर
मानसरोवर मधुशाला।

४४

हिम श्रेणी अंगूर लता-सी
फैली, हिम - जल है हाला,
चंचल नदियाँ साकी बनकर,
भरकर लहरों का प्याला
कोमल कूल-करों में अपने
छलकाती निशिदिन चलतीं,
पीकर खेत खड़े लहराते,
भारत पावन मधुशाला।

४५

वीर सुतों के हृदय-रक्त की
आज बना रक्तिम हाला,
वीर सुतों के वर शीशों का
हाथों से लेकर प्याला,
अति उदार दानी साकी है
आज बनी भारतमाता,
स्वतंत्रता है तृषित कालिका,
बलिवेदी है मधुशाला।

४६

दुत्कारा मस्जिद ने मुझको
कहकर है पीनेवाला,
ठुकराया ठाकुरद्वारे ने
देख हथेली पर प्याला,
कहाँ ठिकाना मिलता जग में
भला अभागे काफ़िर को?
शरणस्थल बनकर न मुझे यदि
अपना लेती मधुशाला।

४७

पथिक बना मैं घूम रहा हूँ,
सभी जगह मिलती हाला,
सभी जगह मिलता प्रिय साक़ी,
सभी जगह मिलता प्याला,
मुझे ठहरने का, हे मित्रो,
कष्ट नहीं कुछ भी होता,
मिले न मंदिर, मिले न मस्जिद,
मिल जाती है मधुशाला।

४८

सजें न मस्जिद और नमाज़ी,
कहता है अल्लाताला,
सजधजकर, पर, साक़ी आता,
बनठनकर, पीनेवाला;
शेख, कहाँ तुलना हो सकती,
मस्जिद की मदिरालय से,
चिर-विधवा है मस्जिद तेरी,
सदा-सुहागिन मधुशाला!

४९

बजी नफ़ीरी और नमाज़ी
भूल गया अल्लाताला,
गाज गिरी, पर ध्यान-सुरा में
मग्न रहा पीनेवाला;
शेख, बुरा मत मानो इसको,
साफ़ कहूँ तो, मस्जिद को
अभी युगों तक सिखलाएगी
ध्यान लगाना मधुशाला!

५०

मुसलमान औ' हिन्दू है दो,
एक, मगर, उनका प्याला,
एक, मगर, उनका मदिरालय,
एक, मगर, उनकी हाला;
दोनों रहते एक न जब त
मस्जिद-मंदिर में जाते;
बैर बढ़ाते मस्जिद-मंदिर,
मेल कराती मधुशाला!

५१

कोई भी हो शेख नमाजी
या पंडित जपता माला,
बैर भाव चाहे जितना हो,
मदिरा से रखनेवाला,
एक बार बस मधुशाला
आगे से होकर निक
देखूँ कैसे थाम न लेती
दामन उसका मधुशाला।

५४

यज्ञ-अग्नि-सी धधक रही है
मधु की भट्ठी की ज्वाला,
ऋषि-सा ध्यान लगा बैठा है
हर मदिरा पीनेवाला,
मुनि कन्याओं-सी मधुघट ले
फिरती साक़ी बा ला एँ;
किसी तपोवन से क्या कम है
मेरी पावन मधुशाला।

५५

सोम-सुरा पुरखे पीते थे,
हम कहते उसको हाला,
द्रोणकलश जिसको कहते थे,
आज वही मधुघट आला;
वेद-विहित यह रस्म न छोड़ो,
वेदों के ठीकेदारो,
युग-युग से है पुजती आई,
नई नहीं है मधुशाला।

२६

वही वारुणी जो थी सागर
मथकर निकली अब हाला,
रंभा की संतान जगत में
कहलाती, 'साकी बाला';
देव-अदेव जिसे ले आए,
संत-महंत मिटा देंगे।
किसमें कितना दम-ख़म, इसको
ख़ूब समझती मधुशाला।

२७

कभी नहीं सुन पड़ता, 'इसने,
हा, छू दी मेरी हाला',
कभी न कोई कहता, 'उसने
जूठा कर डाला प्याला';
सभी जाति के लोग यहाँ पर
साथ बैठकर पीते हैं;
सौ सुधारकों का करती है
काम अकेली मधुशाला।

७०

लिखी भाग्य में जितनी बस
उतनी ही पाएगा हाला,
लिखा भाग्य में जैसा बस
वैसा ही पाएगा प्याला;
लाख पटक तू हाथ-पाँव, पर
इससे कब कुछ होने का,
लिखी भाग्य में जो तेरे बस
वही मिलेगी मधुशाला।

७१

करले, करले कंजूसी तू
मुझको देने में हाला,
देले, देले तू मुझको बस
यह टूटा-फूटा प्याला;
मैं तो सब्र इसी पर करता,
तू पीछे पछताएगी;
जब न रहूँगा मैं तब मेरी
याद करेगी मधुशाला।

प्याला मान का, [illegible] को
छोड़ दिया [illegible]
गौरव भूला [illegible] है
अब है मिट्टी का प्याला;
साकी की अदा-भरी
झिड़की में क्या अपमान धरा,
दुनिया-भर की ठोकर खाकर
पाई मैंने मधुशाला।

७१

क्षीण, क्षुद्र, क्षणभंगुर, दुर्बल
मानव मिट्टी का प्याला,
भरी हुई है जिसके अंदर,
कटु-मधु जीवन की हाला,
मृत्यु बनी है भीषण साकी
अपने शत-शत कर फैला,
काल प्रबल है पीनेवाला,
संसृति है यह मधुशाला।

७४

प्याले-सा गढ़ हमें किसी ने
भर दी जीवन की हाला,
नशा न भाया, ढाला हमने
ले-लेकर मधु का प्याला,
जब जीवन का दर्द उभरता,
उसे दबाते प्याले से;
जगती के पहले साकी से
जूझ रही है मधुशाला।

७५

अपने अंगूरों-से तन में
हमने भर ली है हाला,
क्या कहते हो, शेख, नरक में
हमें तपाएगी ज्वाला,
तब तो मदिरा खूब खिंचेगी
और पिएगा भी कोई,
हमें नरक की ज्वाला में भी
दीख पड़ेगी मधुशाला।

७६

यम आएगा लेने जब, तब
खूब चलूँगा पी हाला,
पीड़ा, संकट, कष्ट नरक के
क्या समझेगा मतवाला,
क्रूर, कठोर, कुटिल, कुविचारी,
अन्यायी यमराजों के
डंडों की जब मार पड़ेगी,
आड़ करेगी मधुशाला।

७७

यदि इन अधरों से दो बातें
प्रेम-भरी करती हाला,
यदि इन खाली हाथों का जी
पल-भर बहलाता प्याला,
हानि बता, जग, तेरी क्या है,
व्यर्थ मुझे बदनाम न कर;
मेरे टूटे दिल का है बस
एक खिलौना मधुशाला।

७८

याद न आए दुखमय जीवन,
इससे पी लेता हाला,
जग चिंताओं से रहने को
मुक्त, उठा लेता प्याला,
शौर, साध के और स्वाद के
हेतु पिया जग करता है,
पर मैं वह रोगी हूँ जिसकी
एक दवा है मधुशाला।

७९

गिरती जाती है दिन-प्रतिदिन,
प्रणयिनि, प्राणों की हाला,
भग्न हुआ जाता दिन-प्रतिदिन,
सुभगे, मेरा तन-प्याला,
रूठ रहा है मुझसे, रूपसि,
दिन-दिन यौवन का साकी,
सूख रही है दिन-दिन सुंदरि,
मेरी जीवन-मधुशाला।

८०

यम आएगा साक़ी बनकर
साथ लिए काली हाला,
पी न होश में फिर आएगा
सुरा-विसुध यह मतवाला,
यह अंतिम बेहोशी, अंतिम
साक़ी, अंतिम प्याला है,
पथिक, प्यार से पीना इसको
फिर न मिलेगी मधुशाला।

८१

ढलक रही हो तन के घट से
संगिनि, जब जीवन-हाला,
पात्र गरल का ले जब अंतिम
साक़ी हो आनेवाला,
हाथ परस भूले प्याले का,
स्वाद-सुरा जिह्वा भूले,
कानों में तुम कहती रहना
मधुकण, प्याला, मधुशाला।

८१

मेरे अधरों पर हो अंतिम
वस्तु न तुलसीदल, प्याला
मेरी जिह्वा पर हो अंतिम
वस्तु न गंगाजल, हाला,
मेरे शव के पीछे चलने-
वालो, याद इसे रखना—
राम नाम है सत्य न कहना,
कहना सच्ची मधुशाला।

८२

मेरे शव पर वह रोए, हो
जिसके आंसू में हाला,
आह भरे वह, जो हो सुरभित
मदिरा पीकर मतवाला,
दे मुझको वे कंधा, जिनके
पद मद-डगमग होते हों,
और जलूँ उस ठौर, जहाँ पर
कभी रही हो मधुशाला।

८६

ज्ञात हुआ यम आने को है
ले अपनी काली हाला,
पंडित अपनी पोथी भूला,
साधू भूल गया माला,
और पुजारी पूजा भूला,
ज्ञान सभी ज्ञानी भूला,
किंतु न भूला मरकर के भी
पीनेवाला मधुशाला।

८७

यम ले चलता है मुझको तो,
चलने दे लेकर हाला,
चलने दे साक़ी को मेरे
साथ लिए कर में प्याला;
स्वर्ग, नरक या जहाँ कहीं भी
तेरा जी हो लेकर चल;
ठौर सभी हैं एक तरह के
साथ रहे यदि मधुशाला।

८८

पाप अगर पीना, समदोषी
तो तीनों—साक़ी बाला,
नित्य पिलानेवाला प्याला,
पी जानेवाली हाला;
साथ इन्हें भी ले चल मेरे,
न्याय यही बतलाता है,
क़ैद जहाँ मैं हूँ, की जाए
क़ैद वहीं पर मधुशाला।

८९

शांत सकी हो अब तक, साक़ी,
पीकर किस उर की ज्वाला,
'और, और' की रटन लगाता
जाता हर पीनेवाला,
कितनी इच्छाएँ हर जाने-
वाला छोड़ यहाँ जाता!
कितने अरमानों की बनकर
क़ब्र खड़ी है मधुशाला!

६०

जो हाला मैं चाह रहा था,
वह न मिली मुझको हाला,
जो प्याला मैं माँग रहा था,
वह न मिला मुझको प्याला,
जिस साकी के पीछे मैं था
दीवाना, न मिला साकी,
जिसके पीछे था मैं पागल,
हा, न मिली वह मधुशाला!

६१

देख रहा हूँ अपने आगे
कब से माणिक-सी हाला,
देख रहा हूँ अपने आगे
कब से कंचन का प्याला,
'बस अब पाया!'—कह-कह
कब से दौड़ रहा इसके पीछे,
किंतु रही है दूर क्षितिज-सी
मुझसे मेरी मधुशाला।

१२

कभी निराशा का तम घिरता,
छिप जाता मधु का प्याला,
छिप जाती मदिरा की आभा,
छिप जाती साकीबाला,
कभी उजाला आशा करके,
प्याला फिर चमका जाती,
आँखमिचौली खेल रही है
मुझसे, मेरी मधुशाला।

१३

'आ आगे' कहकर कर पीछे
कर लेती साकीबाला,
होंठ लगाने को कहकर हर
बार हटा लेती प्याला;
नहीं मुझे मालूम कहाँ तक
यह मुझको ले जाएगी,
बढ़ा-बढ़ाकर मुझको आगे,
पीछे हटती मधुशाला।

९४

हाथों में आने-आने में, हाय,
फिसल जाता प्याला,
अधरों पर आने-आने में,
हाय, ढुलक जाती हाला;
दुनियावालो, आकर मेरी
क़िस्मत की ख़ूबी देखो,
रह-रह जाती है बस मुझको
मिलते - मिलते मधुशाला।

९५

प्राप्य नहीं है तो, हो जाती
लुप्त नहीं फिर क्यों हाला,
प्राप्य नहीं है तो, हो जाता
लुप्त नहीं फिर क्यों प्याला;
दूर न इतनी हिम्मत हारूँ,
पास न इतनी पा जाऊँ;
व्यर्थ मुझे दौड़ाती मरु में
मृगजल बनकर मधुशाला।

९६

मिले न पर ललचा-ललचा क्यों
आकुल करती है हाला,
मिले न पर तरसा-तरसाकर
क्यों तड़पाता है प्याला,
हाय, नियति की विषम लेखनी
मस्तक पर यह खोद गई—
'दूर रहेगी मधु की धारा,
पास रहेगी मधुशाला।'

९७

मदिरालय में कब से बैठा,
पी न सका अब तक हाला,
यत्न सहित भरता हूँ, कोई
किंतु उलट देता प्याला;
मानव-बल के आगे निर्बल
भाग्य, सुना विद्यालय में;
'भाग्य-प्रबल,मानव निर्बल' का
पाठ पढ़ाती मधुशाला।

९८

किस्मत में था खाली खप्पर,
खोज रहा था मैं प्याला;
ढूँढ़ रहा था मैं मृगनयनी,
किस्मत में थी मृगछाला;
किसने अपना भाग्य समझने
में मुझ-सा धोखा खाया;
किस्मत में था अवघट मरघट,
ढूँढ़ रहा था मधुशाला!

९९

उस प्याले से प्यार मुझे जो
दूर हथेली से प्याला,
उस हाला से चाव मुझे जो
दूर अधर-मुख से हाला;
प्यार नहीं पा जाने में है,
पाने के अरमानों में!
पा जाता तब, हाय, न इतनी
प्यारी लगती मधुशाला।

१००

साक़ी के है पास तनिक-सी
श्री, सुख, संपति की हाला,
सब जग है पीने को आतुर
ले-ले क़िस्मत का प्याला;
रेल-ठेल कुछ आगे बढ़ते,
बहुतेरे दबकर मरते,
जीवन का संघर्ष नहीं है,
भीड़-भरी है मधुशाला।

१०१

साक़ी, जब है पास तुम्हारे
इतनी थोड़ी-सी हाला,
क्यों पीने की अभिलाषा से
करते सबको मतवाला;
हम पिस-पिसकर मरते हैं,
तुम छिप-छिपकर मुसकाते हो;
हाय, हमारी पीड़ा से है
क्रीड़ा करती मधुशाला।